ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-5* August-2020
Anthology : The Research

सांख्य दर्शन में आत्मविचार : एक दार्शनिक अध्ययन

Doctrine of Soul or Self: A Philosophical Critique in Sankhya Philosophy

Paper Submission: 12/08/2020, Date of Acceptance: 25/08/2020, Date of Publication: 26/08/2020

ललन कुमार
अतिथि व्याख्याता,
दर्शन शास्त्र विभाग,
राजेन्द्र मिश्र महाविद्यालय,
सहरसा, बिहार, भारत

सारांश

सांख्य दर्शन में आत्मा को पुरुष की संज्ञा दी गई है। सांख्य पुरुष को चेतन, ज्ञाता, विषयी तथा अनुभविता मानता है । पुरुष की सत्ता एवं इसकी अनेकता को सिद्ध करने के लिए सांख्य ने पांच तर्क प्रस्तुत किए हैं। पुरुष निष्क्रिय, निर्गुण और अपरिणामी हैं ,जो कभी भी बंधन में नहीं पड़ता। वह अकर्ता है अर्थात कर्तत्व एवं परिणाम से सर्वथा रहित है।

In Sankhya philosophy, the soul is labeled as Purush. Sankhya considers Purusha as conscious, knowledgeable, subjective and experiential. Sankhya has presented five arguments to prove the power of man and its plurality. Men are passive, unarmed and disinterested, who never fall into bondage. He is irresistible, that is, utterly devoid of duty and consequence.

मुख्य शब्द : सांख्य दर्शन, दार्शनिक, आत्मा, प्रकृति ।
Sankhya Philosophy, Philosopher, Soul, Nature.

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन का आरम्भ आध्यात्मिक असंतोष का परिणाम है। दार्शनिक प्रयत्नों का मूल उद्देश्य जीवन के दुःखों का अन्त ढूँढना रहा है और तात्विक प्रश्नों का प्रादुर्भाव इसी सिलसिले में हुआ। इन्ही प्रश्नों में एक प्रश्न उभरकर आता है आत्म विचार की अवधारणा। ऐसा कोई दर्शन नहीं है, जिसमें इस मूलभूत समस्या पर विचार न किया हो। दर्शन के विभिन शाखाओं में आत्मा को भिन्न–भिन्न नामों से पुकारा गया हैं। सांख्य दर्शन में आत्मा को पुरूष की संज्ञा दी गई है। आत्मा के संबध में विभिन्न मत भारतीय दर्शन में देखने को मिलता है। यहाँ हम सांख्य दर्शन के परिपेक्ष्य में आत्मा की चर्चा कर रहें है।

अध्ययन का उद्देश्य

आत्मा के स्वरूप को लेकर दार्शनिकों में मतैक्य नहीं है। फिर भी कुछ ऐसे महत्वपूर्ण बिंदु हैं जिसे विभिन्न दार्शनिकों ने स्वीकार किया है। सांख्य दर्शन के आत्मा संबंधी अवधारणा को यहां प्रस्तुत करने का हमारा उद्देश्य आत्मा के सिद्धि में दिए गए तर्कों का निरीक्षण करना है। साथ ही साथ उसके महत्वपूर्ण पक्षों को उजागर करना है।

विषय विस्तार

सांख्य ने आत्मा को चैतन्य स्वरूप माना है। चेतना आत्मा का मूल लक्षण है। चैतन्य के अभाव में आत्मा की कल्पना भी असंभव है। चेतना आत्मा का स्वरूप ही है। वह ज्ञान का विषय नही हो सकता। सांख्य ने आत्मा को अकर्ता कहा है आत्मा आनन्द–विहीन है। आनन्द गुणों का फल है और आत्मा त्रिगुणातीत है। अतः आत्मा को निगुण कहा गया है।

जैसा कि बताया गया कि सांख्य दर्शन में आत्मा के लिए 'पुरूष' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसलिए आगे इसी शब्द का प्रयोग किया जाएगा। सांख्य द्वैतवादी दर्शन है। इसने दो स्वतंत्र तत्वों प्रकृति तथा पुरूष को स्वीकार किया है सांख्य द्वारा अभिमत दूसरा तत्व पुरूष है।

पुरूष चेतन या आत्मतत्व है। यह विषयी ज्ञाता, अनुभाविता है। यह शरीर, इन्द्रिय बुद्धि, अहंकार और मन से भिन्न है। पुरूष चैतन्य स्वरूप है, चैतन्य उसका स्वभाव है वह स्वतः सिद्ध और स्वप्रकाश है। वह साक्षी है, कूटस्थ नित्य है। वह व्यापक और विभु है। वह कार्यकारण भाव से परे है। वह दिक कालातीत है। यह प्रकृति के विपरीत है। सांख्य दर्शन में पुरूष को निष्क्रिय तथा निर्गुण माना गया है।[1]

सांख्य ने पुरूष की सता सिद्व करने के लिए पाँच युक्तियाँ दी है। ईश्वर कृष्ण ने अपनी सांख्यकारिका में इसे इस प्रकार व्यक्त किया है–

'' संघातपरार्थत्वात त्रिगुणादिविपर्ययादाधिष्ठानात। [2]
पुरुषोंस्ति भोक्तृभावात कैवल्यार्थ प्रवृतेश्च ।। 17।।

इसकी व्याख्या इस प्रकार है–

संघातपरार्थत्वात

अव्यक्त प्रकृति और उससे उत्पन्न संघातरूपी समस्त व्यक्त कार्य समूह जड़ होने से अपने लिए नहीं है, बल्कि उनकी सता किसी अन्य के लिए है जो चेतन हो तथा जिसके प्रयोजन को साधने के लिए उनकी सता हो। प्रकृति, तीनों गुण बुद्वि, अहंकार, मन, इन्द्रियाँ शरीर आदि सब पुरूष के भोग और अपवर्ग रूपी प्रयोजन को सिद्व करने के लिए प्रवृत होते है। अतः अव्यक्त प्रकृति तथा व्यक्त कार्य समूह से सर्वथा भिन्न चेतन पुरूष की सता सिद्व होती है।

त्रिगुणादिविपर्ययात

प्रकृति के तीन गुण सत्व, रजो तथा तमो गुण है। सगुण निर्गुण की ओर एवं चेतन अचेतन की ओर तथा परिणामी अपरिणामी की ओर संकेत करता है। यह निस्त्रिगुण अपरिणामी चेतन पुरूष है।

अधिष्ठानात

हमारा समस्त लौकिक ज्ञान सुख–दुःख का अनुभव, बुद्वि, अहंकार या मनोमूलक हमारी सारी चितवृतियाँ ज्ञाता या अनुभविता की ओर संकेत करती है जो समस्त ज्ञान को सारी चितवृतियो को प्रकाशित करके एकता के सूत्र में पिरोये रखता है। यह साक्षिचैतन्य प्रकाशित है। अतः ज्ञान और समस्त अधिष्ठान के रूप मे पुरूष की सता सिद्व होती है।

भोक्तृभावात

प्रकृति तथा उसके कार्य जड़ होने से भोग्य है। वे अपना उपयोग नही कर सकते है। जड़ भोग्य वस्तु के भोगार्थ चेतन भोक्ता की सता अनिर्वाय है। यह चेतन भोक्ता पुरूष है।

कैवल्यार्थ प्रवृतेश्च

विविध दुःखों की आत्यन्तिक निवृति को कैवल्य कहा गया है। कुछ आध्यात्मिक स्वभाव के ज्ञानी पुरूष इस कैवल्य प्राप्ति में प्रयत्नशील रहतें है। यह प्रकृति–पुरूष के विवेक ज्ञान से संभव है। अतः पुरूष की स्वतन्त्र सता सिद्व होती है।[3]

भारतीय दर्शन में पुरूष या आत्मा के एक या अनेक होने के भिन्न–भिन्न मत दिखलायी पड़ते है। सांख्य दर्शन जैन मीमांसा और रामानुज के मतों के समान पुरूष की अनेकता में विश्वास करता है। सांख्य पुरूषों में संख्यागत भेद है और गुण–गत अभेद है। सभी पुरूष स्वरूपतः समान है, गणना में भिन्न है। सांख्यकारिका में ईश्वर कृष्ण ने निम्न कारिका के माध्यम से पुरूष की अनेकता सिद्व किया हैः–

''जनन–मरण करणानां प्रतिनियमादयुगपत प्रवृतेश्च। [4]
पुरूष बहुत्व सिद्व त्रैगुण्यविपर्ययाच्चैव '' ।।
साख्यकारिका 18

इसकी व्याख्या इस प्रकार है–

(1) जनन–मरण करणानां प्रतिनियमात–पुरूषों में (1) जन्म (2) मृत्यु और (3) इन्द्रियों का भेद स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है। विभिन्न पुरूषों का जन्म अलग–अलग होता है, उनकी ज्ञानेन्द्रियाँ अलग होती है। अन्यथा एक पुरूष के जन्म से सबका जन्म तथा एक की मृत्यु से सबकी मृत्यु हो जाती। इसी प्रकार जब कोई पुरूष किसी रूप–रस गन्ध–शब्द स्पर्श का अनुभव करता तो सब पुरूषों को वही अनुभव एक साथ होता किन्तु ऐसा नही होता अतः पुरूष की अनेकता सिद्व होती है।

अयुगपत प्रवृतेश्च

विभिन्न पुरूषों में प्रवृति भी अलग–अलग होती है तथा अन्तःकरण और कमेन्द्रियाँ अलग–अलग होती है। अन्यथा जब कोई व्यक्ति सुख या दुःख का अनुभव करता तो सब उसी सुख–दुःख का एक साथ अनुभव करते या जब कोई व्यक्ति चलता खाता पीता या बोलता तो सभी उसी प्रकार और उसी समय चलते खाते पीते या बोलते तब एक पुरूष के बन्धन से सबका बन्धन और एक की मुक्ति से सबकी मुक्ति हो जाती। किन्तु ऐसा नही होता है। इससे पुरूषों की अनेकता सिद्व होती है।

त्रैगुण्यविपर्यायात चैव

मुक्त पुरूषों मे केवल संख्यागत भेद है तथा स्वरूपतः वे समान है। बद्व पुरूषों मे संख्यागत तथा गुणगत दोनों प्रकार के भेद है। किसी पुरूष में सत्वगुण की प्रधानता में न्यूनाधिक भेद के कारण प्रति शरीर के अधिष्ठाता पुरूषों में भेद सिद्व होता है।[5]

आलोचना

सांख्य को विशुद्व चैतन्यपुरूष में तथा अन्तः करण प्रतिबिंबित चैतन्य रूप जीव मे भेद करना चाहिये, किन्तु सांख्य इस को भूल कर दोनों को एक ही मान लेता है। यह सांख्य दर्शन का एक बड़ा दोष है। सांख्य पुरूष को शुद्व चैतन्यस्वरूप, स्वप्रकाश नित्य, साक्षी, द्रष्टा, निर्गुण, निर्विकार तथा ज्ञान का अधिष्ठान मानता है। यह पुरूष का पारमार्थिक या वास्तविक स्वरूप है जो बन्धन संसरण और मोक्ष की कल्पनाओं से सर्वदा अस्पृष्ट है। जब पुरूष बुद्वि मे प्रकाशित अपने प्रतिबिम्ब को ही अपना असली स्वरूप मान लेता है तब वह बद्व जीव प्रतित होने लगता है। यह जीव प्रमाता और भोक्ता है। जन्म, मृत्यु, इंद्रिय आदि का प्रतिनियम जीवों में सिद्ध होता है और जीव अनेक माने जाते हैं। बन्धन मोक्ष और संसरण भी जीवों के होते है। किन्तु सांख्य पुरूष और जीव के भेद को भूलकर पुरूष को अनेक मानता है। निर्गुण पुरूष में गुणों के न्यूनाधिक्य का प्रतिपादन करता है, नित्य पुरूष को जन्म मरणशील मानता है, विभिंन्न पुरूष में भोक्तृत्व की कल्पना करता है। यदि सांख्य पुरूष को एक और अनेक जीवों को पुरूष के विभिन्न आभासों के रूप में मान ले तो उसके अन्तर्विरोध मिटाये जा सकतें है। अन्यथा द्वैतवाद तथा वस्तुवाद के प्रबल मोह ने सांख्य को अन्तर्विरोधो की परम्परा में जकड़ दिया है। [6]

निष्कर्ष

सांख्य दर्शन में पुरूष की अवधारणा भारतीय वाड०मय में अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं श्लांघनीय रही है। यह अवधारणा अद्वैव वेदान्तीय 'आत्मा' विचार की पूर्व भूमि है एवं इसी प्रकार सम्पूर्ण भारतीय दार्शनिक आत्म विचार का उत्स भी सांख्य–दर्शन का स्पष्ट मत है कि पुरूष साक्षी है केवल है। मध्यस्थ है, द्रष्टा है एवं अकर्ता है। यह पुरूष का मूलरूप है।

संदर्भ ग्रथ सूची

1. *भारतीय दर्शन : आलोचन और अनुशीलन चन्द्रधर शर्मा, पृष्ठ सं0– 146,*
2. *सांख्यकारिका, ईश्वरकृष्ण, का. 17*
3. *भारतीय दर्शन, श्री सतीशचंद्र चटटोपाध्याय ,वं श्री धीरेन्द्र मोहन दत्त , पृष्ठ संख्या 259*
4. *सांख्यकारिका, ईश्वरकृष्ण, का. 18*
5. *भारतीय दर्शन, चंद्रधर शर्मा ,पृष्ठसंख्या –148*
6. *वही, पृष्ठ संख्या– 157*